Perspective Article

यज्ञमय जीवन:एक वृहत यज्ञ

आकांक्षा प्रजापति[1], राकेश वर्मा[2]

[1]शोधार्थी, योग विज्ञान एवं मानव चेतना विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
[2]सहायक प्रोफेसर, योग विज्ञान एवं मानव चेतना विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
*ईमेल: aakanksha257@gmail.com
https://doi.org/10.36018/ijyr.v4i2.77

सारांश. आज समाज में अनेकों भौतिक साधन उपलब्ध हैं, परन्तु उसके उपरांत भी हर तरफ उद्विग्नता, अशांति और असंतोष का अन्धकार ही व्याप्त है। यह आवश्यक हो गया है कि मनुष्य जीवन में यज्ञ के महत्व को समझकर अपने जीवन जीने की विधि में उसका समावेश करे अन्यथा वह कितने भी साधन उपार्जित कर ले, उसे सुख और संतोष नहीं मिल सकेगा और समाज में अनाचार ऐसे ही पनपता रहेगा। यज्ञ हमारी संस्कृति का आराध्य इष्ट रहा है तथा यज्ञ के बिना हमारे दैनिक जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यज्ञ की महिमा का वेदों में, उपनिषदों में, गीता में, रामायण में, श्रीमद्भागवत आदि में प्रमाण सहित विस्तार से बताया गया है। परन्तु यज्ञ शब्द मात्र मंत्रों के माध्यम से आहुति देना ही नहीं है, अपितु यज्ञ जीवन जीने की एक श्रेष्ठतम विज्ञानसम्मत पद्धति है। जीवन रुपी समाधि को समाज रुपी कुंड में होम करना ही वास्तविक आहुति है। अर्थात जीवन को यज्ञमय बनाने की विधा ही वास्तविक यज्ञ है। यज्ञमय जीवन वास्तव में क्या होता है? यह जानने के लिये निम्न बातें समझना आवश्यक है- यज्ञ क्या है? यज्ञ का वस्तविक स्वरूप कैसा होता है? यज्ञ की क्या आवश्यकता है? यज्ञ के महत्व क्या हैं? यज्ञ वास्तव में कर्मकांड तक ही सीमित नहीं है, अपितु यज्ञ का विस्तार जीवन दर्शन तक है। यदि यज्ञ को इसके व्यापक अर्थों में समझ लिय जाए, तो जीवन की सभी कलाएँ और विज्ञान इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। यज्ञ का व्यापक अर्थ मनुष्य के जीवन का ही रूप हैI यदि दूसरे शब्दों में कहा जाए, तो मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन एक यज्ञ है, और प्रत्येक श्वास उसकी आहुती। जहाँ कोई व्यक्ति अपनी विशेषताओं का उपयोग करके अनेक व्यक्तियों को ऊँचा उठा रहा हो, वहीँ यज्ञ हुआ समझना चाहिए। इस शोध पत्र के माध्यम से विस्मृत हुई यज्ञमय जीवन पद्धति के प्रत्येक महत्वपूर्ण पहलु का विवेचन करके, उसके सभी तथ्यों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है।

कूट शब्द. यज्ञ, आहुती, यज्ञमय जीवन

प्रस्तावना

आज समाज में अनेकों भौतिक साधन उपलब्ध हैं, परन्तु उसके उपरांत भी हर तरफ उद्विग्नता, अशांति और असंतोष का अन्धकार ही व्याप्त है। वहीँ यदि तुलनात्मक दृष्टि से पुरातनकाल की ओर उन्मुख हुआ जाए तो यही दृष्टिगोचर होगा कि तब अल्प साधनों में भी व्यक्ति संतुष्ट तथा प्रसन्न था। यदि साधनों की बाहुल्यता मनुष्य के सुख का स्रोत नहीं है तो क्या है? यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो साधनों में ही नहीं, बल्कि जीवन जीने के आधार में भी बहुत भारी परिवर्तन हुआ

OPEN ACCESS • Copyright (c) 2021 AKANSHA PRAJAPATI
Licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License

है। पूर्व काल में मनुष्य एक दुसरे के साथ ही नहीं बल्कि प्रकृति के विभिन्न घटकों के साथ भी परस्पर आदान-प्रदान के संबंध से बंधा था, और उसकी गरिमा को भली-भांति समझता था। पर यदि आधुनिक युग की बात की जाए तो उसमें मनुष्य भौतिक संसाधन जुटाने की और बुद्धिवादिता की होड़ में इतना व्यस्त हो गया है कि प्रकृति तो दूर उसने अपने जीवन आधार को ही भुला दिया है। अपने लिए साधन संचय ना करके विश्व वसुधा में वितरित करने की भावना, जिसे यज्ञ की उपमा दी गई थी, सुख और संतोष का मूल स्त्रोत है जो अब अपनी जड़ें खो चुकी है। आज समाज में उपार्जन और संचय की अंधी दौड़ ने लोभ, इर्ष्या, द्वेष, अनाचार और पापाचार को जड़ें जमाने का मौका दे दिया है। अत: यह आवश्यक हो गया है कि मनुष्य जीवन में यज्ञ के महत्व को समझकर अपने जीवन जीने की विधि में उसका समावेश करे अन्यथा वह कितने भी साधन उपार्जित कर ले, उसे सुख और संतोष नहीं मिल सकेगा और समाज में अनाचार ऐसे ही पनपता रहेगा। इस शोध पत्र के माध्यम से विस्मृत हुई यज्ञमय जीवन पद्धति के प्रत्येक महत्वपूर्ण पहलु का विवेचन करके, उसके सभी तथ्यों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है (1,2)।

यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप

भारतीय धर्म के अनुसार यज्ञ को पिता, और गायत्री को माता की संज्ञा प्राप्त है। यही भारतीय संस्कृति के आधार स्तंभ हैं। यज्ञ की व्याख्या कुछ इस प्रकार की गई है कि- "जिस कृत्य से सम्पूर्ण विश्व का कल्याण हो वह यज्ञ है।" यज्ञ की वैज्ञानिक विवेचना यह है कि- "जो जितना हल्का होगा वह उतना ही ऊपर उठेगा।" जिस प्रकार जल का कण अग्नि के सम्पर्क में आने पर अपना भारीपन खो देता है, और वाष्प के रूप में परिवर्तित होकर ऊँचा उठ जाता है, ठीक उसी प्रकार एक नन्हा सा बीज भी यज्ञीय परंपरा अपनाकर अपना अस्तित्व त्यागकर विशाल वृक्ष के रूप में शीश ऊंचा उठाकर गौरवान्वित होता है।

अतः यदि कोई मनुष्य अपनी स्वार्थ भरी संकीर्णताओं की परिधि को तोड़कर विराट के सम्मुख अपना आत्मसमर्पण कर दे, तो वह भी विस्तृत क्षेत्र में विचरण कर सकता है। जब हम ताप सहकर हल्के बनने का प्रयास करेंगे, तभी उन्मुख आकाश में विचरण कर सकेंगेI तत्पश्चात ही मानव का रूपाँतरण महामानव के रूप में हो सकता है। यही यज्ञ का आध्यात्मिक स्वरूप है (2)।

यज्ञमय जीवन का अर्थ

यज्ञ प्रयोजन के लिये सबसे महत्वपूर्ण है अग्नि, जिसमें होम करने के पश्चात होम की गई वस्तु की उपलब्धियाँ असीम हो जाती हैं। "अपनी बिखरी हुई और अस्त-व्यस्त, अनगढ़ आदतों को जब ईंधन बनाकर उत्कृष्टता की अग्नि में होम किया जाता है, तो ज्योतिर्मय अग्निदेव प्रकट होकर यज्ञ के प्रयोजन को पूरा करते हैं। सभी अनर्थ, स्वार्थपूर्ण, लोभी, तथा अन्यत्र बिखरी हुइ चेष्टाओं को परिवर्तित कर अर्थपूर्ण, परमार्थ, व लोक- कल्याण के लिए लगा देना ही यज्ञ है।

यदि यज्ञमय जीवन पर प्रकाश डाला जाए तो, हमारी प्रत्येक श्वास ही आहुति है, समय उसका हविश्य है, तथा संयम, पराक्रम और परमार्थ के रूप में वह वसु ,रुद्र, आदित्य के क्रमश: अनुपालन में चलता है। भगवान श्री राम का सम्पूर्ण जीवन यज्ञमय था। उन्होंने लोक-कल्याण के उद्देश्य से अनेकों यज्ञों की रक्षा करके राक्षसीवृत्तियों का संहार किया (4)। मनुष्य को अपनी सम्पूर्ण आयु को यज्ञमय बनाकर बिताना चाहिए, जिसमें सम्पूर्ण शरीर यज्ञरूप हो जाए तथा सभी इंद्रियाँ, मन, बुद्धि, पूर्ण रूप से यज्ञ भावना से परिपूर्ण हो जाएँI मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन स्वार्थ से हटकर परमार्थ और परोपकार के लिए होम हो जाए तो यज्ञ हुआ माना जाएगा।

वास्तविक अर्थों में तो अपने दोषों, दुर्गुणों, स्वार्थ-भाव को भस्म करने के उद्देश्य से उठाया गया साहसी क़दम ही मानव जीवन में यज्ञीय धर्मानुष्ठान का प्रतीक है।

यज्ञमय जीवन का स्वरूप

वेदों में कहा गाया है कि- "श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ है" (5)। हव्य और सुगंधित वस्तुओं की भरपूर मात्रा भंडार गृह में रखी रहने पर किसी लाभ की नहीं। परन्तु जब इन हव्य वस्तुओं को यज्ञाग्नि में ज्योतिर्मय किया जाता है, तो ये सभी वस्तुएँ व्यापकता अपनाकर दीर्घ क्षेत्र में विस्तारित हो जाती हैं, साथ ही अपने गुणों का लाभ अनेकों तक पहुंचाती हैं। यज्ञ सामग्री की ही भाँति मनुष्य की सद्भावनाएँ एवं सत्प्रवृत्तियाँ भी प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहें तो किसी लाभ की नहीं, परंतु जब यज्ञमय जीवन की अग्नि में इनको होम दिया जाता है, तब यह सीमित क्षेत्र में न रहकर विस्तृत और व्यापक बन जाती हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पास ऐसी विशेषताऐं होती हैं, जिन्हें दीप्तिमान बनाकर वह असंख्यो तक उनका लाभ पहुँचा सकता है। यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रक्रिया ही ऐसी है कि उसके साथ आत्मिक विभूतियों एवं भौतिक संपदाओं का लाभ सहज ही जुड़ जाता है।

यज्ञमय जीवन के पालन का चयन करने के पश्चात सृष्टि का प्रत्येक कण विस्तार को प्राप्त करता है, उन्मुख्ता को प्राप्त करता है, अपनी सीमा परिधि को तोड़कर विशाल क्षेत्र में विचरण करता है। परन्तु इन सभी गुणों को आत्मसात करने के लिये ताप के संपर्क में रहकर स्वयं को यज्ञ की अग्नि में तपाकर, यज्ञ की भाँति श्रद्धास्पद होना ही होगा, तभी यज्ञमय जीवन के वस्तविक स्वरूप की अनुभूती व प्रप्ति संभव है।

यज्ञमय जीवन की आवश्यकता

इस संसार में जितनी भी वस्तुएँ हमें प्राप्त हैं, वह यज्ञ का ही प्रसाद हैं जो दान स्वरूप किसी और के द्वारा दी गई हैं। मनुष्य का तो जन्म भी यज्ञ दान के पश्चात ही हुआ हैI पिता द्वारा अपना वीर्य एवं माता द्वारा अपना रज, रक्त एवं मांस दिया गया, तब जाकर हम जन्म प्राप्त करके इस विश्व उद्यान में अपना प्रथम चरण रख पाए हैं। वास्तविक अर्थों में देखा जाए तो हमारे जीवन का प्रत्येक कण प्रत्युपकारों का मूर्तिमान स्वरूप है। परमात्मा ने मनुष्य को जो भी विशेषताएँ और विभूतियां दी हैं, वे संसार के अन्य जीवों की रक्षा, उन्नति, विकास और सहयोग के लिये ही हैं। मनुष्य अपनी शक्तियों का जितना अधिक उपयोग परामार्थ के लिये करेगा, उतना ही अधिक प्रतिफल पाएगा।

वे मनुष्य जो ईश्वर की ही भाँति उस्की सृष्टि को सुंदर, सुदृढ़, शक्तिशाली और योग्य बनाने में अपने सामर्थ्य को होम करते हैं, वे ही जीवन के लक्ष्य को सार्थक कर पाते हैं, और आत्म-कल्याण का लाभ उठाते हैं (6)।

शास्त्रीय उदाहरणों में देखा जा सकता है कि जिस काल में यज्ञीय परंपराओं का अनुसरण और यज्ञीय जीवन का अनुपालन किया गया, उस युग में कोई दरिद्र नहीं रहा, सर्वत्र सुख और सम्पन्नता व्याप्त रही। प्राचीन काल में यज्ञों का महत्व केवल स्वध्याय सत्संग या शास्त्र चर्चातक नहीं था, अपितु जीवन का प्रत्येक क्षेत्र यज्ञमय रखने के उद्देश्य से साधना की जाती थी। अग्निहोत्र तो एक प्रतीक मात्र है, परंतु मूल बात यह है कि मनुष्य को त्यागी, परमार्थी तथा परोपकारी होना चाहिए। परंतु समय के साथ-साथ मनुष्य के जीवन से यह यज्ञमयी परंपरा लुप्त सी हो गई हैI इसी कारण उसके जीवन में स्वार्थ, तृष्णा, दुख, लोभ जैसी कई सारी विलक्षणताऐं आ चुकी हैं।

मनुष्य को अपने सत्कर्मों के द्वारा अपने जीवन को यज्ञमय बनाना ही होगा, तभी जाकर सामाजिक अशांति, उद्विग्नता तथा आकुलता का परिहार हो पाना सम्भव है। इसके पश्चात ही जीवन में सुख, समृद्धि, शांति, उदारता, सहजता और दान जैसी महानताएं अपना स्थान बना पाएँगी।

यज्ञमय जीवन का महत्व

यज्ञमय जीवन का आचरण करने वाले प्रत्येक प्राणी के लिये शास्त्रवर्णित यज्ञफल केवल विश्वास की वस्तु न रहकर अनुभव की वस्तु बन जाती है। शस्त्रों में स्वर्ग की प्रप्ति को यज्ञ का सर्वोच्च फल कहा गया है, किन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति लोक-कल्याण की भावना को अपने व्यवहार का मानदंड बना ले

तो, अवश्य ही सम्पूर्ण संसार मृत्यु से पूर्व ही स्वर्ग रूप में परिणत हो जएगा। यज्ञमय जीवन ही देवों और मानवों में संबन्ध, सहयोग व सम्पर्क स्थापित कराने का उपाय है (7)। ‘‘शिवो नामासिस्वधितिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मा मां हि सीः। न वत्रतयाम्यायुषे अन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्तवाय सुवीर्याय॥‘‘

यजुर्वेद की इस प्रार्थना में कहा गया है कि यज्ञ निश्चित ही कल्याणकारी है। साक्षात परमेश्वर ही जिनके पिता हैं, उन यज्ञ भगवान को नमस्कार है। आप हमें उत्तम आयु, सुपोशित अन्न, समृद्धि, बल, पराक्रम प्रादन करें। हम आपका आवाहन करते हैं (8)|

यज्ञमय जीवन की रीति-नीति

उपनिषदकार सम्पूर्ण जीवन को पहले 4 भागों में बाँटते हैं, परंतु उसके बाद त्रिपदा गायत्री के 3 चरणों में ही जीवनक्रम के तीन भागों की संगति बिठा देते हैं (9)।

प्रथम चरण 24 वर्ष का माना गया है, जिसे प्रातः सवन अर्थात प्रातः कालीन यज्ञ भी कहा गया है। इस यज्ञ में गायत्री छन्द का ही प्रयोग होता है। गायत्री छन्द 24 अक्षरों वाला होता है। यह यज्ञ वसु देवता से सम्बंधित है।

द्वितीय चरण यौवन का माना गया है, जिसे माध्यन्दिन- सवन भी कह गया है। यह अगले 44 वर्ष का होता हैI इस यज्ञ में त्रिष्टुप छन्द का प्रयोग होता है। यह छन्द 44 अक्षरों वाला होता है। यह यज्ञ रुद्र देवता से सम्बंधित है।

तृतीय चरण साँयकालीन यज्ञ का होता है । यह अगले यह 48 वर्षों का माना गया हैI इस यज्ञ में जगति छन्द का प्रयोग होता है। यह छन्द 48 अक्षरों वाला होता है। इस सवन के साथ आदित्य नामक देवता का सम्बन्ध होता है।

यदि किसी भी चरण में कोई रोग हो जाता है तो उस चरण के देव का आवाहन करते हुए कहना चाहिये कि हे देव! मेरे इस यज्ञ की अवधि को प्रकारांतर के अगली अवधि से सम्बद्ध कर दोI मेरे द्वारा संपन्न होने वाला यह यज्ञ कहीं अवरुद्ध ना हो जाए। ऐसी प्रार्थना करने से आरोग्य का पथ प्रशस्त होता है (9)।

अंत में उपनिषद्कार इस आधार का अनुसरण कर रोग मुक्त हुए महर्षिएतरेय का उदाहरण भी छांदोग्य उपनिषद में प्रस्तुत करते हैं। जिसमें वह बतलाते हैं कि, जीवन के सत्य को भलीभाँति जानने वाले महर्षि एतरेय ने रोगी होने पर रोग से कहा- “हे रोग! तू मुझे क्यों कष्ट देता है? संताप देत हे? मैं इससे नहीं मरुँगा।” ऐसा दृढ़ निश्चयात्मक प्रश्न करने पर वो रोग मुक्त हो गये।

वैसे तो यज्ञ कई प्रकार के होते हैं, परंतु जब जीवन यज्ञ की बात की जाती है तो ज्ञात होता है कि यह एक विशेष प्रकार का यज्ञ है जिसमें मनुष्य, स्वयं ही पुरोहित और स्वयं ही यजमान होता है। इस यज्ञ का स्थान है- द्विविध लोक अर्थात मस्तिष्क। यह यज्ञ उन देवों के लिये किया जा रहा है जो दिव्य भाव बनकर मनुष्य के भीतर ही विद्यमान हैं (6)। इस दिव्य यज्ञ में मनुष्य को अपना शरीर होमना होता हैI शरीर के अन्यत्र कोई और होम सामग्री इस यज्ञ मे अर्पित नहीं की जाती। इस प्रकार के जीवन यज्ञ से, देव उत्पन्न होते हैं और मनुष्य के भीतर मैत्री, करुणा, आत्मीयता, प्रसन्न्ता आदि के रूप में विद्यमान हो जाते हैं। यही यज्ञ जीवन यज्ञ कहा जाता है, तथा एसे मनुष्यों का सम्पूर्ण जीवन यज्ञमय बन जाता है।

सारा जीवन ही यज्ञमय बने

किसी कार्य में सफलता प्रप्ति के लिये पुरुषार्थ के साथ दैवीय शक्तियों की सामर्थ्य भी आवश्यक है। कल्याणकारी प्रयोजन की पूर्ति सामर्थ्य व पुरुषार्थ के सहयोग से ही होती है| गीता के तीसरे अध्याय में श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

यज्ञ के निमित्त किये जाने वाले कर्मों के अतिरिक्त अन्य कर्मों में लगा हुआ मनुष्य ही कर्मों से बन्ध जाता हैI इसलिये आसक्ति रहित होकर यज्ञ क़े निमित्त ही कर्म करो। अर्थात यज्ञ के फल को भी ग्रहण करने से पूर्व अर्पण करो, अन्यथा तुम चोर कहलाओगे। यदि यज्ञ से बचे हुए अन्न को खओगे तो पापों से मुक्त हो जाओगे, पर यदि शरीर के पोषण के लिये खाओगे तो पाप को खाओगे (10)।

तत्पर्य यह है कि यज्ञीय आचरण करने वालों का मन अनियमित दिशाओं में भटकना छोड़कर सुनिश्चित्त आधार प्राप्त कर लेता है। उनका पूरा जीवन ही यज्ञ रूपी हो जाता है। उनकी सभी अभिलाषाओं को देवता पूर्ण करतें हैं। उन्हें उच्च कोटि का आत्मीय आनंद प्राप्त होता है। वे जीवन में जब भी किसी परेशानी का अनुभव करते हैं, स्वयं में ही स्वयं का होम करते हैं। एसे मनुष्यों का सम्पूर्ण जीवन यज्ञमय हो जता है।

संस्कार विधि में ऋषी दयानन्द के शब्द हैं–
मनुष्यों के योग्य है कि सब मंगलकार्यों में अपने और पराये कल्याण के लिये यज्ञ द्वारा ईश्वरोपासना करें। इस हेतु सुगंधित होम सामग्री की आहुती यज्ञ कुंड में देवें। इसी प्रकार जीवन रूपी यज्ञ की उत्कृष्टता रूपी अग्नि में सद्भावना, सद्गुणों, श्रद्धा, सदाचार, लोककल्याण, रूपी होम की आहुती करेंगे तो संसार की सभी प्रयोगशालाएँ एवं निर्माणशालाएँ स्वतः ही यज्ञशलाएँ बन जाएँगी। सभी का जीवन सुख, शन्ति और समृद्धि से परिपूर्ण होकर यज्ञमय हो जाएगाI

उपसंहार

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि मनुष्य जीवन में सुख-शन्ति प्राप्त करने का, उत्कृष्टता की ओर अग्रसर होने व जीवन के उद्देश्य को समझ कर तदनुरूप कार्य करने का एक सर्वोच्च मार्ग यज्ञमय जीवन का अनुपालन ही है। जो जीवन के इस आध्यात्मिक रहस्य को समझ लेता है, वह रोग, संताप, शोक से मुक्त हो जाता है। यज्ञमय जीवन का अनुसरण करना ही चिरस्थायी एवं समग्र आरोग्य की उपलब्धि का साधन है। यह जीवन यज्ञ का एक प्रकार का अभ्यास है। यह यज्ञ स्व्यं द्वारा, स्व्यं के ही लिये किया जाता है, इसमें स्व्यं का शरीर ही होमना पड़ता है। किन्तु इस यज्ञ के परिणाम स्वरूप अनेकों का विस्तार सम्भव है। मानव से महामानव तक का परिवर्तन यज्ञमय जीवम के आचरण के माध्यम से ही संभव हैI

संदर्भ

1. Sharma Shriram. Satyug Ki Vapasi (Revival of Satyug). Revised Edition. Yuga Nirman Yojana Vistaar, Gayatri Tapobhumi, Mathura, 2014.
2. Brahmavarchas, editor. *Gayatri Aur Yagya Upayogita aur Aavashyakta*, In: Yagna ka Gyan Vigyan (Pt. Shriram Sharma Acharya Vangmay 25). Second Edition, Akhand Jyoti Sansthan Mathura; 1998: page 1.1
3. Brahmavarchas, editor. *Jeewan Yagna Ki Reeti Neeti*, In: Yagna ka Gyan Vigyan (Pt. Shriram Sharma Acharya Vangmay 25). Second Edition, Akhand Jyoti Sansthan Mathura; 1998: p. 2.43
4. Negi Poonam. *Shriram Ke Jeewan Me Yagna*. In Bhartiya Dharohara. October 18, 2018 Available from: https://www.bhartiyadharohar.com/
5. Sharma Shriram, editor. *Maanava Jeewan Kaa Aadarsh Sanyam*. Akhand Jyoti. 1954;02:04 http://literature.awgp.org/akhandjyoti/1954/February/v2.4
6. Brahmavarchas, editor. *He Pavitra! Apne Ko Yagna Me Jhonk De*, In: Yagna ka Gyan Vigyan (Pt. Shriram Sharma Acharya Vangmay 25). Second Edition, Akhand Jyoti Sansthan Mathura; 1998: Page 2.48
7. Brahmavarchas, editor. *Yagna dwara deva Ka Aayog*, In: Yagna ka Gyan Vigyan (Pt. Shriram Sharma Acharya Vangmay 25). Second Edition, Akhand Jyoti Sansthan Mathura; 1998: page 2.51
8. Sharma Shriram, editor. Yajurveda Samhita 3/63, Revised edition, Yuga Nirman Yojana Vistaar, Gayatri Tapobhumi, Mathura; 2014: p. 3.10
9. Brahmavarchas, editor, *Sara Jeevan Yagnamaya Bane*, In: Yagna ka Gyan Vigyan (Pt. Shriram Sharma Acharya Vangmay 25). Second Edition, Akhand Jyoti Sansthan Mathura; 1998: p. 2.44
10. Shrimad Bhagwat Gita 3/9-12. GitaPress, Gorakhpur Samvat, 2065